भरपुर सिंह एवं अन्य

बनाम

शमशेर सिंह

(सिविल अपील संख्या 7250/2008)

12 दिसंबर, 2008

(एस.बी. सिन्हा और साइरियक जोसेफ, जे.जे.)

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 धारा 63 व 61- वसीयत- का निष्पदान- वृद्ध महिला द्वारा अगनेट के पक्ष में पाँच डिग्ग्री से अलग निष्पदान, अपनी बेटी को बेदखल करना- वसीयत का लाभार्थी, गिरवीदार और वसीयतकर्ता किरायेदार, वसीयतकर्ता के कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा संदिग्ध परिस्थितियों का आरोप- ट्रायल कोर्ट यह मानते हुए कि लाभार्थी कानूनी और वैध वसीयत के निष्पदान को साबित करने में विफल रहा- हालांकि, अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने भी कहा कि वसीयत का निष्पादन साबित हुआ- अपील पर, अभिनिर्धारित : न्यायालय को तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और अपनी अंतरात्मा को संतुष्ट करना चाहिए क्योंकि संदिग्ध परिस्थितियों का अस्तित्व एक महत्वपूर्ण भूमिका

निभाता है- अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने भी इन पहलुओं पर विचार नहीं किया- भले ही वसीयत पंजीकृत थी, वसीयत को साबित करने की वैधानिक आवश्यकताओं की अनुपालना करना होगा- इस प्रकार, उच्च न्यायालय और अपीलीय अदालत के आदेश को रद्द किया गया- मामले पर नए सिरे से विचार जाएगा।

75 वर्ष की आयु वाली आरडी ने 1962 में एक वसीयत निष्पादित की और अपनी सम्पत्तियों की वसीयत प्रतिवादी के पक्ष में कर दी। 1990 में उसकी मृत्यु हो गई और उनकी दो बेटियाँ जीवित रहीं। अपीलकर्ता आररडी के कानूनी उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधि हैं। 1993 में प्रतिवादी ने अपीलकर्ताओं के पक्ष में पारित उत्परिवर्तन के आदेश को रद्द करने के लिए अपीलकर्ताओं के खिलाफ मुकदमा दायर किया। प्रतिवादी ने तर्क दिया कि उन्होंने जीवन भर आररडी की देखभल की और आरडी की मृत्यु उनकी बेटी के घर में हुई और आरडी ने उसकी बेटियों को बेदखल कर दिया था और वह आरडी की कुछ संपत्तियों का गिरवीदार और किरायेदार था। अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया कि आरडी ने प्रतिवादी द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के मदेनजर कोई वसीयत निष्पादित नहीं की: आरडी ने 60 साल पहले, जब उनके पति की मृत्यु हो गई थी तब से आरडी ने अपना मानसिक संतुलन खो दिया था और आरडी की बेटियाँ उनकी देखभाल कर रही थीं। ट्रायल कोर्ट ने माना कि प्रतिवादी यह साबित करने में विफल रहा

कि आरडी ने स्वस्थ दिमाग से उसके पक्ष में कानूनी और वैध वसीयत निष्पादित की। इसने इस आशय की घोषणा के लिए एक डिक्री प्राप्त की कि प्रतिवादी भूमि का कब्जा स्वामी है और अपीलकर्ताओं को भूमि के उस हिस्से को हस्तान्तरित करने से रोक दिया। हालाँकि, इसने अन्य राहतों को अस्वीकार कर दिया। दोनों पक्षों ने अपील दायर की। अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने भी माना कि वसीयत का निष्पादन साबित हुआ था और यह संदिग्ध परिस्थितियों से घिरा नहीं था। इसलिए वर्तमान अपील।

कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया।

1.1 एक वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 के खंड (सी) और साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए साबित किया जाना चाहिए, जिसके तहत वसीयत के प्रस्तावक को इसका निष्पादन उसको प्रमाणित करने वाले एक या अधिक गवाहों को परीक्षित करवाकर करना होगा हालांकि जहाँ वसीयत की वैधता की धोखाधड़ी, जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव के आधार पर चुनौती दी जाती है इसको साबित करने का भार कैविएटर पर होगा। ऐसे मामले में जहाँ वसीयत संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी हो, इसे वसीयतकर्ता का अंतिम वसीयतनामा नहीं माना जाएगा। (पैरा 11) (527-जी, एच, 528- ए)

1.2 वसीयत साबित करने के लिए आवश्यक सबूत की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए साक्ष्य अभियोजन की धारा 90 का कोई आधार नहीं होगा। वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 (सी) और साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 के अनुसार, एक या अधिक प्रमाणित करने वाले साक्षियों को परिक्षित करवाकर साबित करना चाहिए। यदि इसके प्रावधानों की अनुपालना नहीं की सकती है तो, उस स्थिति में उसमें निहित अन्य प्रावधान जैसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 और 70 जो इसके संबंध में अपवाद प्रदान करती है आकर्षित होगी। साधारण दस्तावेज को साबित करने के वैधानिक प्रावधान पर्याप्त नहीं है, क्योंकि साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 यह कहती है कि यदि वसीयत को प्रमाणित करने वाला कम से कम एक गवाह न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अधीन है और साक्ष्य देने में सक्षम है, तो निष्पादन को, कम से कम एक प्रमाणित करने वाले गवाह द्वारा साबित किया जाना चाहिए। [पैरा 14] [531- बी- डी]

1.3 वसीयत के क्रियान्वन में निम्नलिखित जैसी संदिग्ध परिस्थितयां पाई जा सकती है; (i) वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर बहुत अस्थिर और संदिग्ध हो या उसके सामान्य हस्ताक्षर की तरह प्रतीत नहीं हो रहे हैं। (ii) प्रासंगिक समय पर वसीयतकर्ता के दिमाग की स्थिति बहुत कमजोर और दुर्बल हो सकती है। (iii) बिना किसी पर्याप्त कारण के प्राकृतिक

उत्तराधिकारियों के अधिकारों के अपवर्जन जैसी प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में वसीयतकर्ता का स्वभाव अप्राकृतिक, असंभव या अनुचित प्रतीत हो। **(iv)** वसीयतकर्ता का स्वभाव वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा और दिमाग का परिणाम प्रतीत नहीं हो रहा हो। **(v)** प्रस्तावक वसीयत के निष्पादन में प्रमुख भूमिका निभाता रहा हो। **(vi)** ऐसा प्रतीत हो कि वसीयतकर्ता ने कोरे कागज पर हस्ताक्षर किये हैं। **(vii)** वसीयत को लंबे समय तक प्रकाश में नहीं लाया गया। **(viii)** आवश्यक तथ्यों का गलत पठन। यहाँ पर परिस्थितियाँ संपूर्ण नहीं हैं। उचित स्पष्टीकरण की पेशकश के अधीन, वसीयत का निष्पादन विधिवत साबित हुआ था या नहीं, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से उसके अस्तित्व पर विचार किया जाना चाहिए। (पैरा 17 और 18) (532- एफ.एच 533 ए- बी)

2.1 प्रतिवादी, वसीयतकर्ता से संबंधित भूमि का गिरवीदार था। वसीयकर्ता की कुछ संपत्तियों के संबंध में उसे किरायेदार भी कहा जाता है। ये प्रतिपादित नहीं किया गया है कि वसीयतकर्ता पढ़ी- लिखी महिला थीं। उसने अपने बाएं अंगूठे का निशान लगाया था उपरोक्त स्थिति में जो प्रश्न उठाया जाना चाहिए था, वह यह था कि क्या उसकी इस मामले में स्वतंत्र सलाह थी। वसीयत के सबूत के प्रयोजन के लिए इस बात पर विचार करना आवश्यक होगा कि वर्ष 1962 में प्रचलित तथ्य परिस्थितियाँ क्या थीं। यहां तक कि बाद की घटना को मानते हुए भी, अपीलकर्ता अपनी माँ

की देखभाल नहीं कर रहे थे, जैसा कि, इस तथ्य से अनुमान लगाया गया है कि वसीयतकर्ता की मृत्यु के छह दिन बाद ही अपीलार्थीयों को उनकी मृत्यु की खबर मिली हालांकि, इसका ज्यादा महत्व नहीं होगा। (पैरा 14) (530- जी- एच, 531- ए- बी)

2.2 न्यायालय को तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यक है और इसके अलावा उसे अपनी अंतरात्मा को संतुष्ट करने की भी आवश्यकता है क्योंकि संदिग्ध परिस्थितियों का अस्तित्व एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दुर्भाग्य से, प्रथम अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने भी मामले के इन पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया। (पैरा 15) (531ई- एफ, 532- सी)

2.3 वसीयत एक पंजीकृत थी लेकिन इसी आधार पर वसीयत को साबित करने की वैधानिक आवश्यकताओं का अनुपालन करने की आवश्यकता नहीं है, ऐसा नहीं माना जा सकता। इसलिए मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, उच्च न्यायालय और प्रथम अपीलीय अदालत के आक्षेपित फैसले को रद्द किया जाता है और मामले को प्रथम अपीलीय अदालत द्वारा की गई टिप्पणियों के आलोक में नए सिरे से विचार करने का निर्देश दिया जाता है। (पैरा 18 और 19) (533- सी- डी)

एच. वेंकटचला अयंगर बनाम बी.एन. थिम्माजम्मा **एआईआर (1959) एससी 443,** निरंजन उमेशचन्द्र जोशी बनाम मुद्रुला ज्योती राव

एवं अन्य **(2006) 14 एससीएएलई 186;** बी वेक्टामुनी बनाम सीजे अयोध्यारामसिंह एवं अन्य **(2006) 13 एससीसी 449;** अनिल काक बनाम कुमारी शारदा राजे एवं अन्य **(2008) 7 एससीसी 695** और जसवन्त कौर बनाम अमृत कौर एवं अन्य **(1977) 1 एससीसी 369, संदर्भित**

केस कानून संदर्भः

एआईआर (1959) एस सी 443 पैरा 12 का संदर्भ

(2006) 14 एस सी ए एल ई 186 पैरा 13 का संदर्भ

(2006)13 एस सी सी 449 पैरा 14 पर आधार

(2008)7 एस सी सी 695 पैरा 15 का सन्दर्भ

(1977)1 एस सी सी, 369 पैरा 16 का सन्दर्भ

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 7250/2008

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के ओ.एस.ए. संख्या 604/2000 में आदेश दिनांक 17.08.2006 के अन्तिम निर्णय से।

नीरज कुमार जैन, भरत सिंह, संदीप चतुर्वेदी, संजय सिंह और उग्र शंकर प्रसाद अपीलकर्ताओं की ओर से।

एस.डी. शर्मा, बलबीर सिंह गुप्ता प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का फैसला

एस.बी. सिन्हा, जे. द्वारा-

1. अनुमति स्वीकृत।

2. जीवन सिंह की विधवा राम देवी, वसीयतकर्ता, ग्राम घरुआन, तहसील खरड़, जिला रोपड़, पंजाब, जिनके विधिक उत्तराधिकारी और प्रतिनिधि अपीलकर्ता हैं, ने लगभग 30.03.1962 को एक वसीयत निष्पादित की, जब वह लगभग 75 वर्ष की थीं। उन्होंने 19.06.1990 को अंतिम सांस ली।

पक्षों के बीच संबंध दिखाने के लिए हम शुरुआत में वंशावली तालिक पर ध्यान दे सकते हैं।

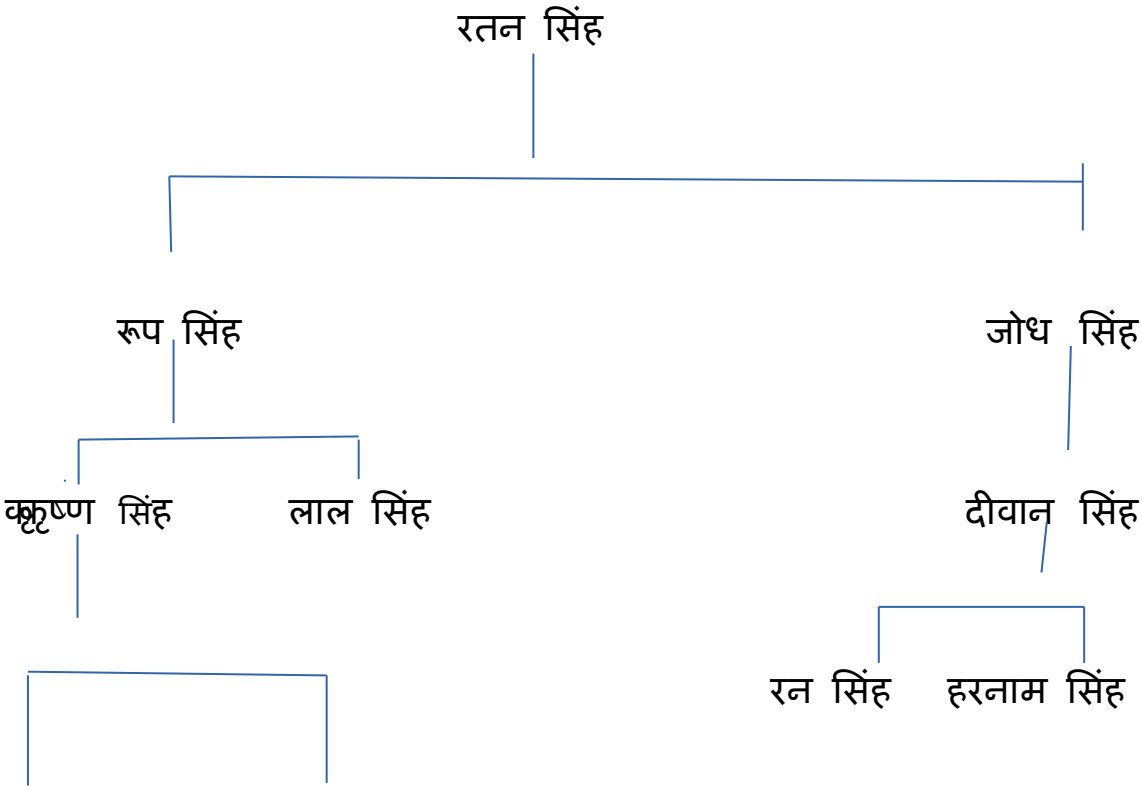

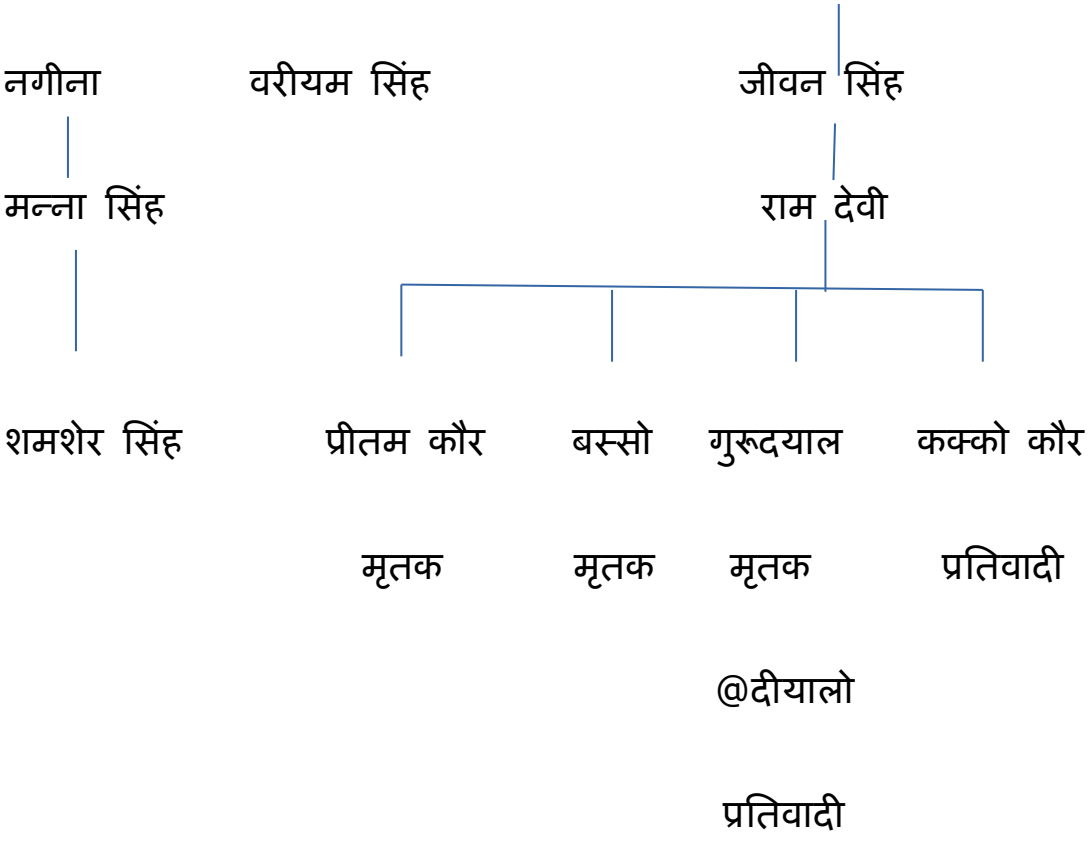

माना जाता है कि वसीयतकर्ता की दो जीवित बेटियाँ जिनके नाम श्रीमती गुरदयाल कौर उर्फ डायलो और श्रीमती कक्को, शादीशुदा थी और दूर कहीं रहती थी। प्रतिवादी ने उक्त वसीयत के तहत लाभार्थी होने के नाते, वर्ष 1993 में अपीलकर्ताओं के खिलाफ एक मुकदमा दायर किया। अन्य बातों के अलावा उनके पक्ष में पारित उत्परिवर्तन के आदेश को इस आधार पर रद्द करने की प्रार्थना की, कि अपीलकर्ताओं ने मुकदमे की भूमि का हस्तांतरण करने और उससे बेदखल करने की धमकी दी थी।

वादी- गैर अपीलकर्ता ने अपनी याचिका में आरोप लगाया कि वसीयत के लेखक के जीवन काल के दौरान, वह उसकी देखभाल करता था और वास्तव में उसकी बेटी इकबाल कौर के घर में ही उसकी मृत्यु हो गई।

3. स्वीकृत रूप से उसकी चार बेटियाँ थीं, जिसमें से प्रतिवादी जीवित थे लेकिन उक्त वसीयत के माध्यम से उन्हें विरासत से बेदखल कर दिया गया था। हालांकि, जब अपीलकर्ताओं के पक्ष में उत्परिवर्तन का आदेश पारित किया गया, तब उक्त मुकदमा दायर किया गया।

4. अपीलकर्ताओं ने अपने लिखित जवाबदावे में वादी द्वारा उठाए गए तर्कों का खंडन किया कि वादी द्वारा राम देवी की देखभाल किये जाने के तथ्य पर आपति जताई। उनके अनुसार, राम देवी द्वारा कथित तौर पर या उनके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के मद्देनजर कोई भी वसीयत निष्पादित नहीं की गई थी। उनके अनुसार, लगभग 60 साल पहले राम देवी के पति जीवन सिंह की हत्या कर दी गई थी, जिसके कारण उसने अपना दिमागी संतुलन खो दिया था और उनकी मानसिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। प्रतिवादियों के अनुसार, उसकी देखभाल उसकी बेटियाँ कर रही थीं।

5. विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, खरार ने पक्षों की दलीलों को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित मुद्दे तय किएः-

1. क्या वादी वाद की भूमि का आधिपत्य वाली स्वामी है?

2. क्या श्रीमती राम देवी ने कानूनी और वैध वसीयत दिनांक 30.03.1962 को वादी के पक्ष में, निष्पादित की? यदि हां, तो इसका क्या प्रभाव क्या होगा?

3. क्या वादी ख/ख न० २५/५९ का कब्जा गिरवीदार है। जैसा कि दावे के मुख्य नोट में अंकित है।

4. यदि विवादक संख्या 3 सिद्ध हो गया है, तो क्या मोचन की साम्यता समाप्त हो गई है?

5. क्या वादी, प्रार्थना की गई, स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री प्राप्त करने का हकदार है?

6. क्या वादी को उसके कार्य और आचरण से वर्तमान मुकदमा दायर करने से विवंदित किया गया है?

7. अनुतोष"

विद्वान विचारण न्यायाधीश ने माना कि वादी यह साबित करने में विफल रहा कि राम देवी ने स्वस्थ दिमाग से उसके पक्ष में एक विधिक और वैध वसीयत निष्पादित की थी।

अन्य बातों के अलावा, यह मानते हुए कि वादी एक बाहरी व्यक्ति था, यह भी कहा गया:-

"यद्यपि वसीयत में उल्लेख मिलता है कि वसीयतदार शमशेर सिंह वसीयतकर्ता के पति का भतीजा है और शमशेर सिंह के पिता बिजला सिंह ने वसीयतकर्ता की बेटियों की शादी के समय वसीयतकर्ता की मदद की थी, लेकिन वादी ने अपने दावे में कहीं भी ऐसा नहीं किया है, न ही उस संबंध में कोई सबूत था। इस प्रकार वसीयत में ये तर्क स्पष्ट रूप से तथ्यात्मक स्थिति के विपरीत हैं और यह पता चलता है कि शमशेर सिंह किसी भी तरह से राम देवी से संबंधित नहीं है। वादी ने यह साबित करने के लिए कोई भी सबूत नहीं दिया कि वसीयतकर्ता की मृत्यु तक वह वसीयतकर्ता की देखभाल और सेवा कर रहा था। वादी के एकल बयान को छोड़कर, जो कि एक हितबद्ध साक्ष्य है, गाँव का कोई अन्य व्यक्ति इस बिन्दु पर वादी का समर्थन करने के लिए आगे नहीं आया। पी डब्ल्यू 4 प्रीतम सिंह, गाँव घुअन से वादी द्वारा परिक्षित होने वाले एक मात्र गवाह है कि इस तथ्य के संबंध में एक भी शब्द नहीं कहा। वादी ने यह साबित करने के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया कि उसके पास श्रीमती राम देवी के साथ संयुक्त राशन कार्ड था और राम देवी का उसके पते पर वोट था। वादी का यह तर्क कि राम की मृत्यु उसकी बेटी इकबाल कौर के घर राजपुरा

में हुई, का कोई मतलब नहीं है क्योंकि इस बारे में चुप है कि, उस समय राम देवी उसकी बेटी के घर पर क्या कर रही थी। इसके अलावा, वादी ने इकबाल कौर या राजपुरा के किसी अन्य व्यक्ति को यह स्थपित करने के लिए परिक्षित नहीं करवाया कि राम देवी वादी की विधवा बेटी इकबाल कौर के साथ रह रही थी। वादी ने अपनी दलीलों में कहीं भी यह निवेदन नहीं किया कि श्रीमती राम देवी उसकी बेटी इकबाल कौर के साथ राजपुरा में रहती थी और इकबाल कौर उसकी देखभाल करती थी। पत्रावली के अवलोकन से पता चलता है कि वादी और उसके पिता पहले से ही वाद की भूमि के एक हिस्से पर किरायेदार के रूप में थें और शेष वाद की भूमि पर रेहनदार के रूप में कब्ज में थे। यदि वादी, एक तरह उसके पिता, और दूसरी ओर राम देवी के बीच संबंध इतने मधुर थे कि वादी, दूसरे पक्ष की देखभाल और सेवा कर रहा था, तो राम देवी को उनके पास वाद भूमि का एक हिस्सा गिरवी रखने और बाकी जमीन उन्हें किराये पर देने की कोई आवश्यकता नहीं थी। इससे पता चलता है कि उनके बीच संबंध पेशेवर और व्यावसायिक प्रकार के थे। यह वादी के मामले की जड़ में कटौती करता है कि वह राम देवी की देखभाल और सेवा कर रहा था और

राम देवी ने प्यार और स्नेह से उसके पक्ष में एक वसीयत निष्पादित की थी।"

विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, खरार, पंजाब, ने अपने निर्णय और डिक्री दिनांक 24.08.1995 द्वारा विवादक संख्या 1और 2 का निर्णय अपीलकर्ताओं के पक्ष में निर्धारित किया। विद्वान न्यायाधीश ने इस आशय की घोषणा के लिए एक डिक्री दी कि वादी- प्रतिवादी ख/ख क्रमाँक 25/29, ख क्रमाँक 1644 (5- 0), 1645 (3- 0), 1646 (6- 5), 1647 (6- 5), 1648 (5- 10) ग्राम, घरुआन में स्थित है वाली भूमि का आधिपत्य है जो कि वर्ष 1988- 89 जमाबंदी के अनुसार कब्जेदार स्वामी है जिसके परिणामस्वरूप अपीलकर्ताओं को मुकदमे की विवादित भूमि का बेचान करने से प्रतिबंधित किया हालांकि, मुकदमे में माँगी गई अन्य राहतें नहीं दी गईं।

6. इससे व्यथित और असंतुष्ट होकर, दोनो पक्षों ने इस के निर्णय विरुद्ध अपील की।

7. दिनांक 01.10.1999 के फैसले और आदेश के आधार पर, अपीलीय न्यायालय ने कहा कि वसीयत का निष्पादन साबित होना चाहिए और सभी संदिग्ध परिस्थितियों को यह कहते हुए खारिज किया गया-

".....एकमात्र निष्कर्ष जो निकाला जा सकता है वह यह है कि वसीयत, एक वास्तविक दस्तावेज है और जो 28 साल से अधिक समय पहले मृतक ने अपनी मर्जी से निष्पादित की थी और मृतक ने उसे कभी भी रद्द करने की कोशिश नहीं की। इस तथ्य से कि, कुछ भूमि राजस्व रिकॉर्ड में मृतक वादी के पिता के पास गिरवी थी, इसका अर्थ यह नहीं है कि दोनों पक्षों के बीच केवल वाणिज्यिक संबंध थे। सर्वप्रथम, मूल बंधक विलेख पत्रावली पर यह इंगित करने के लिए कि, वादी या उसके पिता को भूमि बन्धक में मिली थी या उन्होंने बंधक अधिकार किसी और से खरीदे थे, पेश नहीं की गयी है। केवल मात्र इस तथ्य से कि शमशेर सिंह ने वसीयत के निष्पादन में भाग लिया था, यह इंगित नहीं होता कि उसने मृतक राम देवी पर वसीयत के लिए कोई प्रभाव डाला था। यदि ऐसा था तो राम देवी ने निष्पादन के बाद अपने जीवन के 28 वर्षों से अधिक समय के भीतर इस वसीयत को रद्द क्यों नहीं कराया। दूसरी ओर, प्रतिवादियों ने कोई राशन कार्ड या मतदाता सूची पेश कर यह साबित नहीं किया है, जैसा कि, डायलो ने शपथ पर अपने बयान में दावा किया था कि, मृतक स्थायी रूप से उनके साथ रह रही थी। वसीयत में पूरी जानकारी दी गई

बताया गया है कि, मृतका की चार बेटियाँ हैं और उनमें से दो की पहले ही मौत हो चुकी है। यदि वादी अजनबी है तो उसे यह बात पता नहीं होनी चाहिए थी। वसीयत सदैव प्राकृतिक उत्तराधिकार से हटकर निष्पादित की जाती है। यदि मृतका चाहती थी कि उसकी बेटी उसकी उत्तराधिकारी बने तो वसीयत निष्पादित करने की कोई आवश्यकता नहीं थी...."

अपीलीय न्यायालय ने यह कहते हुए दोनों अपीलें स्वीकार कर ली कि;

"पूर्वगामी चर्चा के परिणामस्वरूप, अपील जिसका शीर्षक डायलो आदि बनाम शमशेर सिंह संख्या 241, दिनांक 27/09/95, आर टी संख्या 148/ 27.09.1995 / 27.02.1999 है, को विवाद्यक संख्या 3 व 4 प्रतिवादी के पक्ष में व वादी के विरूद्ध तय किए जाने के कारण स्वीकार की गयी। शमशेर सिंह बनाम डायलो आदि शीर्षक वाली अपील संख्या 236/ 07.09.1995, आर टी संख्या, 439/07.09.1995, 02.06.1999 भी विवाद्यक संख्या 1, 2 व 5 पर मेरे निकर्ष के अनुसार स्वीकार की गयी। इसके परिणामस्वरूप, वादी के वाद को आंशिक रूप से स्वीकार

किया गया और इस आशय की घोषणा की गयी कि वादी उस वाद भूमि का, जिसकी पंजीकृत वसीयत प्रदर्श पी 2 रामदेवी विधवा जीवन सिंह दिनांकित 30.03.1962 के आधार पर, जिसका संपूर्ण विवरण वाद पत्र के मुख्य नोट में संपूर्ण तरीके से दिया गया है, का कब्जेदार स्वामी बन गया है। प्रतिवादियों को किसी भी तरीके से मुकदमे की सम्पत्तियों को हस्तांतरित करने या किसी भी तरीके से वादी के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा भी दी गई। इसके अलावा बंधकदार के अधिकारों का गैर मोचन के आधार पर राहत का मुकदमा खारिज किया गया....."

8. यहां अपीलकर्ताओं द्वारा की गई दूसरी अपील को उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के आधार पर यह कहते हुए खारिज कर दिया कि;

"विवादित वसीयत 30.03.1962 को निष्पादित की गई थी और कहा गया कि वसीयतकर्ता की मृत्यु 19.06.90 को हो गई थी। तथ्य यह है कि इस पूरी अवधि के दौरान, वसीयतकर्ता के मन में कोई दूसरा विचार नहीं आया, जो कि वसीयतकर्ता के इरादे की स्पष्टता के बारे में बताता है। यह तथ्य कि यह वसीयत पंजीकृत थी, वसीयत की वैधता

को और अधिक विश्वसनीय बनाता है। यह भी साक्ष्य में है कि, गुरदयाल कौर और काको अपनी माँ के साथ नहीं रह रही थी और अपनी माता के जीवित रहने के दौरान उन्होंने उनका पोषण नहीं किया था। अपनी गवाही में, उन्होंने कहा है कि उन्हें राम देवी की मृत्यु के बारे में, उनकी मृत्यु के लगभग 5 से 6 दिन बाद पता चला। वास्तव में, सभी प्रतिपक्ष के गवाहों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। यह गुरदयाल कौर और काको के अपनी माता के साथ के रिश्ते का एक प्रतिबंब और मापबिंदु है कि काको, गुरदयाल कौर के अपनी माँ की मृत्यु के समय अपनी माता के साथ कैसे सम्बन्ध थे। दूसरी ओर यह कहा गया है कि राम देवी की मृत्यु वादी- प्रतिवादी की बेटी इकबाल कौर के घर में हुई थी। यह वसीयतकर्ता के अपने प्राकृतिक उत्तराधिकारियों को उनके अधिकारों से वंचित करने का पर्याप्त कारण था...."

9. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री नीरज कुमार जैन ने निवेदन किया-

i. अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निष्कर्षों पर पहुंचने में गंभीर त्रुटि की है, क्योंकि वे इस बात पर विचार करने में विफल रहे कि प्रतिवादी/वादी ने राजस्व अधिकारियों के समक्ष वसीयत प्रस्तुत

नहीं की और इसके अलावा वसीयतकर्ता की मृत्यु की तारीख से तीन साल की अवधि तक भी इस वसीयत के आधार पर मुकदमा दायर करने का कोई भी प्रयास नहीं किया।

ii. वादी यह साबित नहीं कर सका कि राम देवी और उनकी बेटियों के बीच संबंध तनावपूर्ण थे।

iii. एक एगनेट को जो पाँच डिग्री से अलग हो को एक रिश्तेदार नहीं कहा जा सकता है, जो कि एक बूढ़ी महिला के लिए उसके पक्ष में वसीयत निष्पादित करने के लिए पर्याप्त आधार हो।

iv. इस बात का कोई कारण नहीं बताया गया है कि वसीयतकर्ता द्वारा बेटियों को क्यों बेदखल कर दिया गया।

v. वसीयतकर्ता के बाएं अंगूठे के निशान की तुलना, बंधक के विलेख में दिखाई देने वाले उसके बाएं अंगूठे के निशान से नहीं की गई थी, जिसके बारे में कहा गया था कि इसे वादी के पक्ष में निष्पादित किया गया था और इस प्रकार, उस पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता था।

vi. वसीयत के लाभार्थी रिहानदार और किरायेदार होने के अलावा सभी निचली अदालतों को यह मानना चाहिए था कि वसीयत संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी हुई थी।

10. दूसरी ओर, प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री एस डी शर्मा ने तर्क दिया-

i. शमशेर सिंह वसीयतकर्ता के संम्पार्श्विको में से एक होने के नाते और वह वसीयतकर्ता राम देवी की देखभाल कर रहा था, वसीयत का निष्पादन साबित हुआ कहा जाना चाहिए।

ii. चूंकि वसीयत पंजीकृत थी, इससे इसकी प्रमाणिकता उपधारणा होनी चाहिए और 30.3.1962 को निष्पादित होने के कारण इसको 30 वर्षों से अधिक पुराना दस्तावेज होने के कारण भी ऐसा माना जाना चाहिए।

iii. यह तथ्य है कि अपीलकर्ताओं को जो, हालांकि, वसीयतकर्ता की बेटियाँ थी, उन्हें अपनी माँ की मृत्यु के बारे में छः दिन बाद पता चला। यह स्पष्ट रुप से दर्शाता है कि वे अपनी माँ की उनके पुराने दिनों में देखभाल नहीं कर रही थी।

iv. अपीलकर्ता यह साबित करने में विफल रहे हैं कि वे अपनी माँ के साथ कोई रिश्ता निभा रहे थे और बुढापे में उनकी देखभाल उनके द्वारा की जा रही थी।

11. वसीयत के प्रमाण के संबंध में कानूनी सिद्धांत अब भिन्न नहीं रह गए हैं। वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार 1925 की धारा 63 के खंड (सी) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 में निहित

प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए साबित किया जाना चाहिए। जिसके संदर्भ में वसीयत के प्रस्तावक को इसको प्रमाणित करने वाले एक या अधिक गवाहों को परीक्षित कराकर, इसके निष्पादन को साबित करना होगा। हालांकि, जहाँ वसीयत की वैधता को धोखाधड़ी, जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव के आधार पर चुनौती दी जाती है, यह सिद्ध करने का भार कैविएटर पर होगा। ऐसे मामले में जहाँ वसीयत संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी हो, इसे वसीयतकर्ता का अंतिम वसीयतनामा नहीं माना जाएगा।

12. एच. वेंकटचला अयंगर बनाम बी एन थिम्माजम्मा [एआईआर 1959 एससी 443] में इस न्यायालय ने कहा कि, यह तथ्य कि, प्रस्तावक ने वसीयत के निष्पादन में रुचि ली, उन कारकों में से एक है, जिन्हें उचित निष्पादन के निर्धारण के लिए ध्यान में रखा जाना चाहिए। यह भी धारित किया गया है कि एक महत्वपूर्ण विशेषता जो वसीयत को अन्य दस्तावेजों से अलग करती है, वह यह है कि वसीयत, वसीयतकर्ता की मृत्यु की तारीख से अस्तित्व में आती है, इसलिए जब इसे अदालत के समक्ष प्रस्तावित या प्रस्तुत किया जाता है तो वसीयतकर्ता जो पहले ही संसार को छोड़ चुका है, यह नहीं कह सकता कि यह उसकी वसीयत है या नहीं। और यह पहलू स्वाभाविक रूप से इस प्रश्न के निर्णय में गंभीरता का एक तत्व प्रस्तुत करता है कि क्या प्रस्तावित दस्तावेज दिवंगत वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत थी।

यह भी माना गया कि वसीयत के प्रस्तावक को यह साबित करना होगा;

(I) कि वसीयतकर्ता द्वारा वसीयत पर स्वस्थ चित और स्वतंत्र मानसिक स्थिति में हस्ताक्षर किए गए थे और उसने अपनी स्वतंत्र इच्छा से दस्तावेज पर अपने हस्ताक्षर किए थे, और

(ii) जब वसीयत के समर्थन में पेश किए गए साक्ष्य निष्पक्ष, संतोषजनक और वसीयतकर्ता के दिमाग की सही और सुलझी हुई स्थिति और विधि द्वारा अपेक्षित उसके हस्ताक्षर का साबित करने के लिए पर्याप्त हैं, तो अदालतों को प्रस्तावक के पक्ष में निष्कर्ष निकालना उचित होगा, और

(iii) यदि किसी वसीयत को संदेहोंस्पद परिस्थितियों से घिरा हुआ मानकर चुनौती दी जाती है, तो ऐसे सभी वैध संदेहों को ठोस, संतोषजनक और पर्याप्त साक्ष्य द्वारा दूर किया जाना चाहिए।

दूसरे शब्दों में, प्रस्तावक के भार का निर्वहन, आवश्यक तथ्यों के प्रमाण द्वारा किया जावेगा।

इसके अलावा यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि-

20. "हालांकि, ऐसे मामले हो सकते हैं जिनमें वसीयत का निष्पादन संदिग्ध परिस्थितियों से घिरा हो सकता है।

वसीयतकर्ता के कथित हस्ताक्षर बहुत अस्थिर और संदिग्ध हो सकते हैं और प्रस्तावक के मामले के समर्थन में यह सबूत कि प्रश्नगत हस्ताक्षर, वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर है, उत्पन्न संदेह को दूर नहीं कर सकते हैं, वसीयतकर्ता के दिमाग की स्थिति बहुत कमजोर और दुर्बल प्रतीत हो सकती है और प्रस्तुत किए गए साक्ष्य मानसिक क्षमता के बारे में वैध संदेह को दूर करने में सफल नहीं हो सकते हैं। वसीयतकर्ता; वसीयत में किया गया व्यवहार प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में अप्राकृतिक, असंभव या अनुचित प्रतीत हो सकते है; या, वसीयत अन्यथा संकेत दे सकती है कि उक्त स्वभाव वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा और दिमाग का परिणाम नहीं हो सकता है। ऐसे मामलों में अदालत स्वाभाविक रूप से अपेक्षा करेगी कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत के रूप में स्वीकार करने से पहले सभी वैध संदेह पूरी तरह से हटा दिए जाएं। ऐसी संदिग्ध परिस्थितियों की उपस्थिति स्वाभाविक रूप से प्रारंभिक जिम्मेदारी को बहुत भारी बना देती है; और जब तक इसे संतोषजनक ढंग से पूरा नहीं किया जाता, न्यायालय दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम वसीयत मानने में अनिच्छुक रहेगा। यह सच है कि, यदि प्रस्तावित

वसीयत के निष्दपादन के संबंध में अनुचित प्रभाव, धोखाधड़ी या जबरदस्ती के प्रयोग के आरोप लगाते हुए एक कैविएट दायर की जाती है, तो ऐसी दलीलों को कैविएटर द्वारा साबित करना पड़ सकता है; लेकिन, ऐसी दलीलों के बिना भी परिस्थितियाँ यह संदेह पैदा कर सकती हैं कि क्या वसीयतकर्ता वसीयत को क्रियान्वित करने में अपनी स्वतंत्र इच्छा से कार्य कर रहा था और ऐसी परिस्थितियों में, ऐसे किसी भी वैध संदेह को दूर करना प्रारंभिक दायित्व का एक हिस्सा होगा।"

13. इस न्यायालय द्वारा निरंजन उमेशचंद्र जोशी बनाम मृदुला ज्योति राव और अन्य {2006 (14) स्केल 186}, में धारित किया गया,

"33. इस तथ्य को सिद्ध करने का भार कि वसीयत वैध रूप से निष्पादित की गई है और यह एक वास्तविक दस्तावेज हैं, प्रस्तावक पर है। प्रस्तावक को यह भी साबित करना होगा कि वसीयतकर्ता ने वसीयत पर हस्ताक्षर किए हैं और उसने अपनी मर्जी से हस्ताक्षर किए हैं। यह भी कि हस्ताक्षर करते समय वसीयतकर्ता मानसिक रूप से स्वस्थ था और वसीयत की प्रकृति और प्रभाव को समझता था। यदि इस संबंध में पर्याप्त साक्ष्य रिकॉर्ड पर लाया जाता है,

तो प्रस्तावक का दायित्व समाप्त माना जा सकता है। लेकिन यदि संदेह मौजूद है तो पर्याप्त और ठोस सबूत पेश करके संदेह को समाप्त करने का दायित्व आवेदक का होगा। वसीयत के सबूत के मामले में वसीयकर्ता का हस्ताक्षर उसके निष्पादन को साबित नहीं करेगा, यदि वसीयतकर्ता का दिमाग बहुत कमजोर और दुर्बल प्रतीत हो रहा है तो अकेले वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर उसके निष्पादन को साबित नहीं करेगा। हालांकि यदि कोई धोखाधड़ी, जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव का बचाव किया जाता है, तो इसको सिद्ध करने का भार कैविएटर पर होगा। देखे [शेंडे बनाम ताराबाई शेडेज (2002), 2 एससीसी 85 और श्री देवी और अन्य बनाम जयराजा शेट्टी और अन्य (2005), 8 एससीसी 784] उपरोक्त के अधीन, वसीयत का प्रमाण आम तौर पर किसी अन्य दस्तावेज को साबित करने से भिन्न नहीं होता है।"

34. ऐसी कई परिस्थितियाँ हैं जिन्हें इस न्यायालय द्वारा संदिग्ध परिस्थितियों के रूप में वर्णित किया गया है-

(I) जब वसीयतकर्ता के वसीयत पर हस्ताक्षर के बावजूद उसकी मानसिक स्थिति के संबंध में संदेह पैदा हो;

(ii) जब प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में स्वभाव अप्राकृतिक या पूरी तरह से अनुचित प्रतीत हो;

(iii) जहाँ प्रस्तावक स्वंय वसीयत के निष्पादन में प्रमुख भूमिका निभाता है जिससे उसे पर्याप्त लाभ मिलता है;

देखें [एच.वेंकटचला अयंगर बनाम बीनएन थिम्माजम्मा और अन्य एआईआर 1959 एससी 443 और प्रबंधन समिति टीके घोष अकादमी बनाम टीसी पालिट और अन्य। एआईआर 1974 एससी 1495]

14. प्रतिवादी वसीयतकर्ता से संबंधित भूमि का रेहनदार था। वसीयतकर्ता की कुछ सम्पत्तियों के संबंध में उन्हें किरायेदार भी कहा जाता है। ये नहीं बताया गया कि वह एक पढी- लिखी महिला थीं, उसने अपने बाएं अंगूठे का निशान लगाया था उपरोक्त स्थिति में, जो प्रश्न उठाया जाना चाहिए था, वह यह था कि क्या उसकी इस मामले में स्वतंत्र सलाह थी। वसीयत के सबूत के प्रयोजन के लिए यह विचार करना आवश्यक होगा कि वर्ष 1962 में वास्तविक स्थिति क्या थी। यहां तक कि घटना को मानते हुए भी, अपीलकर्ता अपनी माँ की देखभाल नहीं कर रहे थे जैसा कि तथ्य से अनुमान लगाया गया है। उनकी मृत्यु के छः दिन बाद ही उन्हें अपनी माता की मृत्यु की खबर मिली, यह सच है। हमारी राय में, इसका ज्यादा महत्व नहीं है।

वसीयत साबित करने के लिए आवश्यक सबूत की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 90 के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। एक वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63(सी) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 के प्रावधानों के अनुसार साबित किया जाना चाहिए। यदि उसके प्रावधानों का अनुपालन नहीं की जा सकता है, तो उसमें निहित अन्य प्रावधान, अर्थात्, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 और 70 जो इसके संबंध में अपवाद प्रदान करती हैं, लागू होगी। एक सामान्य दस्तावेज को साबित करने के लिए वैधानिक आवश्यकताओं की अनुपालना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 में कहा गया है कि यदि प्रमाणित करने वाला गवाह जीवित है और न्यायालय की प्रक्रिया के अधीन है, और साक्ष्य देने में सक्षम है। देखे [बी वेंकटमुनि बनाम सीजे अयोध्या राम सिंह और अन्य देखें। (2006)13 एससीसी 449] तो निष्पादन को कम से कम एक प्रमाणित करने वाले गवाह द्वारा साबित किया जाना चाहिए।

15. इस न्यायालय के अनिल काक बनाम कुमारी शारदा राजे एवं अन्य (2008) 7 एससीसी 695 में, राय है कि अदालत को तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है और इसके अलावा उसे अपने विवेक को संतुष्ट करने की भी आवश्यकता है क्योंकि संदिग्ध परिस्थितियों का अस्तित्व एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, यह कहते हुए-

"52. जबकि किसी अन्य दस्तावेज के निष्पादन को दस्तावेज के लेखन या उसकी सामग्री के साथ- साथ उसके निष्पादन को सिद्ध करके साबित किया जा सकता है, परन्तु संदेह की परिस्थितियों मौजूद होने पर पक्षकार जो प्रोबेट और/या प्रशासन पत्र प्राप्त करना चाहता है, संलग्न वसीयत की एक प्रति को संलग्न करके उसकी प्रमाणिकता को सिद्ध करने के लिए न्यायालय की संतुष्टि के लिए साक्ष्य में भी प्रस्तुत करना होगा।

53. चूंकि प्रोबेट देने का आदेश लोकपक्षी निर्णय है, न्यायालय को भी आदेश पारित करने से पहले अपने विवेक को संतुष्ट करना चाहिए।

54. यह सच हो सकता है कि प्राकृतिक उत्तराधिकारियों द्वारा उचित हिस्से से वंचित होना एक संदिग्ध परिस्थिति नहीं माना गया हो लेकिन यह उन कारकों में से एक है जिन पर वसीयत पर प्रोबेट देने से पहले अदालतों द्वारा विचार किया जाता है।

55. अन्य दस्तावेजों के विपरीत, यहां तक कि अधिपत्यजन का आशय भी सत्यापन को साबित करने के लिए आवश्यक घटक है।"

दुर्भाग्य से, प्रथम अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय ने भी मामले के इन पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया।

16. हम देख सकते हैं कि जसवन्त कौर बनाम अमृत कौर और अन्य(1977)1 एससीसी 369) में इस न्यायालय ने बताया कि जब वसीयत कथित तौर पर संदेहों में घिरी होती है, तो इसका सबूत वादी और प्रतिवादी के बीच एक साधारण मामला नहीं रह जाता है। ऐसे मामलों में प्रतिकूल कार्यवाही न्यायालय के विवेक का मामला बन जाती है और वसीयत के प्रस्तावक को यह संतुष्ट करने के लिए सभी संदिग्ध परिस्थितियों को समाप्त करना होगा और यह सिद्ध करना होगा कि वसीयतकर्ता द्वारा वसीयत को विधिवत निष्पादित किया गया था, जिसके लिए वसीयत बनाने में जुड़ी संदिग्ध परिस्थितियों का ठोस स्पष्टीकरण पेश किया जाना चाहिए।

17. वसीयत के क्रियान्वयन में निम्नलिखित जैसी संदिग्ध परिस्थितियाँ पाई जा सकती हैं-

(I) वसीयतकर्ता का हस्ताक्षर बहुत अस्थिर और संदिग्ध होना या उसके सामान्य हस्ताक्षर जैसा प्रतीत नहीं होना।

(ii) प्रासंगिक समय पर वसीयतकर्ता के दिमाग की स्थिति बहुत कमजोर और दुर्बल होना।

(iii) बिना किसी कारण के, प्राकृतिक उत्तराधिकारियों को उनके अधिकारों से वंचित करना या उसके अधिकारों का अभाव मानना जैसी प्रासंगिक परिस्थितियों के आलोक में वसीयतकर्ता का स्वभाव अप्राकृतिक, असंभव या अनुचित होना।

(iv) वसीयत, वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा और दिमाग का परिणाम नहीं होना।

(v) प्रस्तावक वसीयत के निष्पादन में प्रभुख भूमिका निभाना।

(vi) वसीयकर्ता का कोरे कागजों पर हस्ताक्षर करना।

(vii) वसीयत को लंबे समय तक प्रकाश में नही लाना।

(viii) आवश्यक तथ्यों का गलत पाठन करना।

18. यहां बताई गई परिस्थितियाँ संपूर्ण नहीं हैं। उचित स्पष्टीकरण की पेशकश के अधीन, वसीयत का निष्पादन विधिवत साबित हुआ था या नहीं, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से उसके अस्तित्व पर विचार किया जाना चाहिए।

यह सच हो सकता है कि वसीयत पंजीकृत थी, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं होगा कि वसीयत को साबित करने की वैधानिक आवश्यकताओं का अनुपालन करने की आवश्यकता नहीं है।

19. प्रथम अपीलीय अदालत द्वारा की गयी टिप्पणियो के प्रकाश में तथा इस मामले में विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि उच्च न्यायालय और प्रथम अपीलीय अदालत के आक्षेपित फैसले को रद्द कर दिया जाना चाहिए और मामले पर नए सिरे से विचार करने का निर्देश दिये जाने चाहिए। तदानुसार आदेश दिया गया।

उपरोक्त टिप्पणियों एवं निर्देशों के साथ अपील स्वीकार की जाती है। हालांकि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, खर्चा के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया।

एन.जे। अपील स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अनु अग्रवाल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।